वित्तीय संकट - कुछ पुराने प्रश्न और शायद कुछ नए जवाब *

दुव्वुरी सुब्बाराव

सर चिंतामन डी.देशमुख के सम्मान और स्मरण में भाषण देना किसी के लिए भी विशेषाधिकार की बात है। यह विशेषाधिकार भारतीय रिज़र्व बैंक के सेवारत गवर्नर के लिए और भी विशेष है। प्रति दिन जब मैं कार्य पर जाता हूं तब मुझे इस बात की खुशी और गर्व होता है कि मैं उस संस्था में कार्य कर रहा हूं जिसकी प्रतिष्ठा इतनी ऊंची है।

2. मैं इस बात को अच्छी तरह जानता हूँ कि उक्त ऊंची प्रतिष्ठा का मुख्य श्रेय रिज़र्व बैंक के स्टाफ की सक्षमता और व्यावसायिकता, इसके संस्थागत मूल्य और संस्कृति तथा महत्वपूर्ण रूप से पूर्व गवर्नरों के बेजोड़ नेतृत्व को जाता है। वर्तमान में, रिज़र्व बैंक के गवर्नर के रूप में मैं रिज़र्व बैंक के गवर्नरों के उत्तराधीकार की विद्वत्तापूर्ण प्रतिष्ठा के आगे नतमस्तक हूं। उन सब के बीच सर चिंतामन का अलग ही स्थान हैं जिसका कारण मात्र यह नहीं है कि वे रिज़र्व बैंक के पहले भारतीय गवर्नर थे, बल्कि उन्होंने भारत में केंद्रीय बैंकिंग की नीतिमूल्य पूर्ण और विद्वत्तापूर्ण आधारशीला रखी और हम सब उनके उत्तराधिकारी उनके विशाल कंधों पर खड़े हैं।

3. लगभग दो माह पूर्व मैं पुणे में रिज़र्व बैंक के अभिलेखागार में गया था जहां मैंने प्रधानमंत्री नेहरु द्वारा गवर्नर देशमुख को लिखा गया पत्र देखा जिसमें देश की खस्ता आर्थिक स्थिति पर चिंता व्यक्त करते हुए उनसे विश्लेषण और मार्गदर्शन मांगा गया था। वह पत्र न सिर्फ सर चिंतामन की विद्वत्ता का स्तर दर्शाता है बल्कि वह इस बात का सबूत भी है कि रिज़र्व बैंक के गवर्नर के रूप में उनका स्थायी महत्व है जिससे बाद के प्रधानमंत्रियों का रिज़र्व बैंक पर विश्वास बना रहा।

4. हम स्वतंत्रता प्राप्ति के तत्काल बाद के हमारे अनेक नेताओं - राजनीतिज्ञ, प्रशासनिक अधिकारी, विद्वान लोग, कंपनियों के प्रमुख और सामाजिक कार्यकर्ता - के ऋणी हैं जिन्होंने स्वतंत्र भारत के संस्थागत ढांचे के निर्माण में योगदान दिया। हमारे लोकतंत्र के विशाल आकार को देखते हुए, पंडित नेहरु की देश के प्रति आकांक्षा और कम शिक्षा

* डा. दुव्वुरी सुब्बाराव, गवर्नर, भारिबैं द्वारा हैदराबाद में 5 अगस्त 2010 को सामाजिक विकास परिषद, दक्षिण क्षेत्रीय केंद्र में दिया गया दसवां सी. डी. देशमुख स्मरणार्थ व्याख्यान।

और जागरुकता स्तर के कारण यह हर प्रकार से कठिन कार्य था। सर चिंतामन जिनका सार्वजनिक कार्य लगभग तीन दशक चला, उस समय के नेताओं में प्रमुख थे। मात्र रिज़र्व बैंक ही नहीं बल्कि हमारी अनेक संस्थाएं सर चिंतामन की प्रतिबद्धता आधुनिक आर्थिक और समावेशक समाज के रूप में भारत के विचारों की साक्ष्य हैं।

5. 1943-49 के दौरान रिज़र्व बैंक के गवर्नर के रूप में सर चिंतामन के विद्वत्ता-मूल्य, प्रगतिपरक विचार, सूक्ष्म योजना और परिधि से बाहर तक विचार करने की उनकी क्षमता ने अर्थव्यवस्था को उस समय की कठिन स्थिति में संभालने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मैं अपने निजी अनुभवों से जानता हूं कि अन्य अनेक पदों की तुलना में गवर्नर का कार्य इस तनाव को संभालने का होता है कि कौनसा कार्य अल्पावधि और साथ ही मध्यावधि तथा दीर्घावधि के संदर्भ में उचित होगा। अपने कार्यों से सर चिंतामन ने यही दर्शाया कि किसी भी केंद्रीय बैंक का धर्म अल्पावधि बाध्यताओं की तुलना में दीर्घावधि स्थिरता की रक्षा करना होना चाहिए।

6. मुझे यह निर्णय लेने के लिए संघर्ष करना कि सर चिंतामन जैसे उच्च विद्वान और सामाजिक प्रतिबद्धता वाले व्यक्ति के लिए किस प्रकार की श्रद्धांजलि उपयुक्त होगी। उनके संबंध में पढ़ने पर मुझे पता चला कि वे उन विभूतियों में से एक थे जिनका यह विश्वास एक ऐसे भारत के निर्माण में था जिसका आधार पारंपरिक विवेक का पुन:मूल्यांकन और पुरानी समस्याओं के नए समाधान तथा पुराने प्रश्नों के नए उत्तर होगा।

7. इसमें आज की स्थिति की अनुगूंज होगी क्योंकि विश्व हमारे समय के सर्वाधिक प्रबल वित्तीय संकट के पश्च प्रभाग से संभलने की कोशिश कर रहा है। वैश्विक संकट ने हमारे कई विचारों को चुनौती दी है और ऐसे प्रश्नों को पुन: खोला है जिसके बारे में हम सोचते थे कि उनका समाधान हो गया है। श्री सी.डी.देशमुख की स्मृति में और उनके उल्लेखनीय ज्ञानवर्धक कार्यों के लिए उन्हें सम्मान देने हेतु मुझे पाँच प्रश्न पूछने हैं और यह देखना है कि संकट ने संभवत: इनके क्या नए जवाब दिए है। वे पाँच प्रश्न निम्नानुसार है:

i. क्या उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं (ईएमई) विकसित अर्थव्यवस्थाओं से अलग हो गई है?

ii. क्या केंद्रीय बैंकों को केवल मुद्रास्फीति लक्ष्य जारी रखना चाहिए?

iii. क्या वित्तीय स्थिरता केंद्रीय बैंकों का एक प्रमुख कार्य होना चाहिए?

iv. क्या पूँजी खाता के प्रबंधन के लिए नियंत्रण एक उपयुक्त व्यवस्था है?

v. क्या मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्त्व समाप्त हो गया है?

प्रश्न 1: क्या उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं (ईएमई) विकसित अर्थव्यवस्थाओं से अलग हो गई हैं?

8. संकट से पहले इसका जवाब सकारात्मक रूप से 'हाँ' था। अलग होने की परिकल्पना का यह कहना था कि यदि विकसित अर्थव्यवस्थाएं मंदी में चली जाती है तब सुधारित नीति ढाँचा, मजबूत बाह्य आरक्षित निधियाँ और लचीले वित्तीय क्षेत्र के कारण उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अलग होने की परिकल्पना की मूल शुरूआत का पता लगाना मुश्किल है किंतु यह मानना उचित होगा कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के उत्कृष्ट विकास कार्य निष्पादन से प्रेरित है।

9. स्पष्ट रूप से, विभेदक विकास कार्य-निष्पादन स्वयं अपने आप अलग होने की परिकल्पना का निष्कर्षात्मक पुष्टिकरण नहीं हैं। किंतु अलग होने की परिकल्पना अपनी पहली जाँच में विफल रही जो हाल ही के संकट के दौरान

हुई थी। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के बैंकिंग क्षेत्रों की तुलनात्मक रूप से खराब आस्तियों में सीमित निवेश थे और उनकी तुलन-पत्र से इतर गतिविधियाँ सीमित थी। अतः यदि अलग होने की परिकल्पना कार्य कर जाती तो उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं संकट से बच जाती। फिर भी, सभी उभरती अर्थव्यवस्थाएं संकट से प्रभावित हुई। हालांकि जैसे-जैसे संकट वित्त, विकास और व्यापार चैनलों से गुजरा इसका प्रभाव विभिन्न स्तर पर हुआ।

10. हमारी सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली और तुलनात्मक रूप से मज़बूत वित्तीय बाज़ारों को गिनती में न लेते हुए भारत को वैश्विक वित्तीय प्रणाली में हुए व्यापक आघातों का प्रभाव पड़ा। प्रभाव का पहला दौर वैश्विक सहायता हटाने की प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप पूँजी प्रवाहों का अचानक बंद हो जाना और उसके बाद लौट आने के माध्यम से आया। इसने हमारे विदेशी मुद्रा बाज़ारों तथा हमारे ईक्विटी बाज़ारों को हिला दिया। जैसे ही कॉपोरेटस ने यह पाया कि अचानक उनके निधियन के बाहरी स्त्रोत बंद हो गए हैं और वे निधियन के लिए घरेलू बैंक और गैर-बैंक स्त्रोतों की ओर मुड़े लगभग उसी समय पर हमारे ऋण बाज़ार दबाव में आए ।

11. संकट अंतरण का सबसे अधिक फैलाने का मार्ग विश्वास चैनल था। सितंबर 2008 के मध्य में लीमन के ढह जाने के बाद कई हफ्तों तक रोज़ ऐसे समाचार आते रहे कि और एक बड़ी संस्था ढ़ह गयी है। इस अनिश्चितता के वैश्विक परिदृश्य में विकसित देशों के बाज़ारों में विश्वास के अभाव ने हमारे बाज़ारों पर भी कुछ-कुछ प्रभाव डाला। इसका समग्र परिणाम यह हुआ कि हमारे सभी वित्तीय बाज़ार ईक्विटी, उधार, मुद्रा, विदेशी मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाज़ार विभिन्न स्तरों पर दबाव में आए। अंततः वास्तविक क्षेत्र के माध्यम से आए संकट के अंतरण ने प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डाला जो वित्तीय गिरावट के बाद आयी वैश्विक मंदी के कारण हमारे माल और सेवाओं की निर्यात माँग में तेज़ी से गिरावट हुई।

12. मैंने यहाँ भारतीय स्थिति का कुछ विस्तार से चित्रण किया है किन्तु जो हमने यहाँ अनुभव किया वह कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तरह ही था, केवल उसके प्रभाव के स्तर में कुछ अंतर था। मुद्दे की बात यह है कि संकट का परिणाम अलग होने पर सुखाभास का छितराव था।

13. तो क्या उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं विकसित अर्थव्यवस्थाओं से अलग हो गईं? इस पुराने प्रश्न का नया उत्तर भी नवीन है। इसका 'जोरदार' उत्तर है कि अलग होने से कोई काम नहीं बनता। वैश्विकृत दुनिया में कोई भी देश एक टापू बन कर नहीं रह सकता है। विश्वभर में जो कुछ भी होता है वह हर अर्थव्यवस्था को प्रभावित करता है। इसका प्रभाव अर्थव्यवस्था के समेकन के स्वरूप और गहराई पर निर्भर होता है। तथापि, 'सुगमता' से अलग होना काम आता है। अर्थव्यवस्थाओं के लिए बाहरी संकट से बचना संभव है, किंतु इसके लिए उन्हें अपने विकास के चालकों में विविधता लाने, स्वचालित स्थायीकारी लगाने और उन स्थायीकारी को अपनाने के लिए राजकोषीय जगह विकसित करने, उनकी वित्तीय प्रणालियों को प्रभावी रूप से नियंत्रित करने और आर्थिक प्रबंध में शीघ्रता और दक्षता लाने की आवश्यकता है।

प्रश्न 2: क्या केंद्रीय बैंकों को केवल मुद्रास्फीति के लक्ष्य के साथ काम करते रहना चाहिए?

14. संकट के पूर्व का जबाब (इस प्रश्न का) लगातार 'हाँ' में पुष्ट हो रहा था।

15. संकट के पूर्व के वर्षों मुद्रास्फीति को लक्ष्य बनाने के प्रति एक सशक्त बौद्धिक सहमति निर्मित होते हुए देखा। वर्ष 1980 के दशक में न्यूज़ीलैण्ड से शुरू करते हुए केंद्रीय बैंकों की संख्या में बढ़ोतरी के साथ तथा वर्तमान में उनकी संख्या 20 से अधिक होने पर उन्होंने प्राय: विशिष्ट रूप से मुद्रास्फीति को स्थिर करने के लिए मौद्रिक नीति को तेज़

करने के सिद्धांत को स्वीकार किया है। वहाँ भी जहाँ केंद्रीय बैंक संक्षिप्त मुद्रस्फीति दर का लक्ष्य नहीं रखते हैं उनके नीति उद्देश्यों की जानकारी दी गई है यद्यपि वे मूल्य स्थिरता द्वारा नियंत्रित नहीं है। यह दृष्टिकोण सफल होता दिखाई दिया। स्थिर वृद्धि और न्यूनतम बेरोजगारी के साथ मूल्य स्थिरता लंबी अवधि तक बनी हुई थी जिसमें एक ऐसे विश्व में जो संकट के पहले विद्यमान था, केंद्रीय बैंकरों ने भारी विजय प्राप्त की। उन्होंने होली ग्रेल का पता लगा लिया था।

16. संकट के दौरान उस महान सुधार के प्रकटीकरण ने मुद्रास्फीति को लक्ष्य बनाने के न्यूनतम सूत्र के इर्द-गिर्द बनने वाली सहमति को विलीन कर दिया है, यद्यपि वह पूरी तरह से गायब नहीं हुआ है। संकट के पूर्व मूख्य धारा की यह सोच थी कि मूल्य स्थिरता और वित्तीय स्थिरता परस्पर प्रभावित करती है। इस संकट ने यह साबित कर दिया है कि यह गलत था। हमने देखा है कि मूल्य स्थिरता अनावश्यक रूप से वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित नहीं करती है। वास्तव में एक मज़बूत मान्यता भी है कि मूल्य स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के बीच एक शुरुआत होती है और यह कि कोई केंद्रीय बैंक मूल्य स्थिरता से अधिक सफल होता है तो यह अधिक संभावित है कि वह वित्तीय स्थिरता को जोखिम में डालता है।

17. इस मामले पर भारत में हम कहाँ खड़े हैं? रिज़र्व बैंक मुद्रास्फीति को लक्ष्य करने वाला नहीं है। तथापि, एक प्रभावी विचार यह है कि हमारी अर्थव्यवस्था की बेहतर सेवा हो सकेगी यदि रिज़र्व बैंक शुद्ध रूप से मुद्रास्फीति को लक्ष्य में रखनेवाला बन जाता है। तर्क यह है कि भारत जैसे किसी देश में मुद्रास्फीति बहुत अधिक प्रभावित करती है जहाँ कई करोड़ लोग गरीब हैं और यह कि रिज़र्व बैंक मुद्रास्फीति से लड़ने में अधिक प्रभावी होगा यदि इस पर अन्य उद्देश्यों का भार नहीं हों।

18. यह तर्क विचारयोग्य है। भारत में कई कारणों से मुद्रास्फीति पर लक्ष्य साधना न तो वांछनीय है और न व्यवहारिक है।

i. हमारी जैसी किसी उभरती हुई अर्थव्यवस्था में केंद्रीय बैंक के लिए यह व्यावहारिक नहीं है कि स्पष्टत: भारी विकास संदर्भ में विशेष रूप से मुद्रास्फीति पर ध्यान केंद्रित किया जाए। रिज़र्व बैंक को वृद्धि, मूल्य स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के बीच संतुलन रखने की जरूरत है।

ii. सर्वदा नहीं लेकिन अक्सर भारत में मुद्रास्फीति के संचालन आपूर्ति पक्ष से उत्पन्न होते हैं। विभिन्न उपभोक्ता मूल्य सूचकांकों (सीपीआइ) में खाद्य मदों का भार 46 से 70 प्रतिशत होता है और वे आपूर्ति आघातों के लिए कुख्यात हैं जो सामान्यत: मौद्रिक नीति के आवरण है। यह मुद्रास्फीति लक्ष्यकर्ता के रूप में हमारी संभावित क्षमता को विलीन कर देती है।

iii. हम किस मुद्रास्फीति सूचकांक पर लक्ष्य रखते हैं? हमारा हेडलाइन मुद्रास्फीति सूचकांक थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यूपीआइ) है और परिभाषा के अनुसार वह उपभोक्ता मूल्य स्थिति को नहीं दर्शाता है। 1.2 बिलियन लोगों वाली एक भारी अर्थव्यवस्था के लिए एकल प्रतिनिधि मुद्रास्फीति को देखते हुए अलग-अलग बाज़ार तथा विविधतापूर्ण जनसांख्यिकी एक भयानक चुनौती है।

iv. मुद्रास्फीति का लक्ष्य रखने के लिए काम करनेवाली एक आवश्यक स्थिति प्रभावी मौद्रिक अंतरण है। हमारी मौद्रिक अंतरण व्यवस्था सुधर रही है लेकिन अभी भी इसे मज़बूत मानकों तक पहुँचना है। लागू ब्याज दरों, बैंकों तथा इनके जमाकर्ताओं के बीच असमान संविदापरक संबंध, तरलतारहित बाण्ड बाज़ारों तथा भारी सरकारी उधारों के कारण अभी भी इसमें अवरोध बना हुआ है। मौद्रिक अंतरण के लिए ये अवरोध मुद्रास्फीति लक्ष्यकर्ता के रूप में हमारी प्रभावक्षमता में कमी लाते हैं।

v. अंत में भारी और अस्थिर पूँजी प्रवाह हमारे बाह्य क्षेत्र की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता बने रहेंगे। इन प्रवाहों

का प्रबंध करने का अर्थ उसका प्रबंध करना है जिसे असंभव ट्रिनिटी - निर्धारित विनिमय दर, खुला पूँजी खाता और स्वतंत्र मौद्रिक नीति के बीच संतुलन स्थापित करना कहा जाने लगा है। मुद्रास्फीति को लक्ष्य में रखना किसी असंभव ट्रिनिटी स्थिति में स्पष्टत: संभव नहीं है।

19. मेरे तर्क का व्यापक स्वरूप यह है कि रिज़र्व बैंक शुद्ध रूप से मुद्रास्फीति लक्ष्यकर्ता नहीं हो सकता और इसे होना भी नहीं चाहिए। संकट के बाद विश्वभर में व्याप्त धारणा को *नए वातावरण परिकल्पना* द्वारा स्वरूप प्रदान किया गया था जिसमें यह कहा जाता है कि शुद्ध रूप से मुद्रास्फीति पर लक्ष्य करने के अलावा लचीले मुद्रास्फीति लक्ष्य अधिक सक्षम हैं। इस परिकल्पना के अनुसार यदि मुद्रास्फीति लक्ष्य से बाहर रहती है, तो किसी केंद्रीय बैंक की पहली माँग इसे स्वीकार्य सीमा के भीतर लाने की होगी और यदि मुद्रास्फीति सीमा के भीतर है तो केंद्रीय बैंक को अन्य उद्देश्यों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

20. संक्षेप में पुराने प्रश्न *क्या केंद्रीय बैंक को केवल मुद्रास्फीति का लक्ष्य रखना चाहिए* का जबाब लगातार निश्चित *हाँ* से बदलकर अर्हक *हाँ* होता गया है।

प्रश्न 3: क्या वित्तीय स्थिरता केंद्रीय बैंकों का एक स्पष्ट अधिदेश होना चाहिए?

21. संकट के पहले इस प्रश्न का कोई जवाब नहीं था - यह इस कारण से नहीं था कि एक बौद्धिक शून्यता व्याप्त थी बल्कि वास्तव में किसी ने भी इस प्रकार उल्लेखनीय ढंग से यह प्रश्न नहीं पूछा था।

22. संकट के बाद की वित्तीय स्थिरता मुख्य चर्चा में आ गई है। इस संकट का सबसे बड़ा सबक यह है कि मूल्य स्थिरता और समष्टि आर्थिक स्थिरता के एक वातावरण में भी वित्तीय स्थिरता खतरे में पड़ सकती है। यह अब भी संभव है कि इस संकट के अनुभव के आधार पर एक मज़बूत तर्क दिया जाए कि मूल्य स्थिरता और समष्टि आर्थिक स्थिरता की विस्तारित अवधियाँ वस्तुत: अपने भीतर पलती हुई वित्तीय अस्थिरता के लिए नीति निर्माताओं को अंधेरे में रखें। संकट से इन सबकों ने इस बात पर जोरदार बहस शुरू कर दी है कि क्या वित्तीय स्थिरता केंद्रीय बैंकों का एक स्पष्ट अधिदेश होना चाहिए।

23. इसके लिए सशक्त तर्क हैं कि क्यों केंद्रीय बैंक वित्तीय स्थिरता के कार्य के केंद्र में रहें। मैं उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण बातों की सूची देना चाहूँगा।

i. सामान्यत: मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता परस्पर सहायक होती हैं। इन दोनों आयामों के बीच एक-दूसरे पर निर्भरता यह प्रस्तावित करती है कि मौद्रिक नीति के लिए अंतर्निहित दायित्व के साथ केंद्रीय बैंक को वित्तीय स्थिरता का प्रभारी प्रणालीगत नियंत्रक होना चाहिए ताकि वह दोनों आयामों में लागत और लाभ को अलग करने के द्वारा नीति विकल्पों का समग्र रूप से अवलोकन कर सके।

ii. मौद्रिक नीति के लिए केंद्रीय बैंक के दायित्व पर कोई सवाल नहीं उठता है क्योंकि बैंक एक माध्यम हैं जिनके द्वारा मौद्रिक नीति निर्णयों को वास्तविक अर्थव्यवस्था में अंतरित किया जाता है। बैंकों तथा केंद्रीय बैंक को भी विवेकपूर्ण नियंत्रण के लिए दायित्व सौंपना सहक्रियात्मक है। यदि केंद्रीय बैंक विवेकशील नियंत्रक है तो प्रणालीगत नियंत्रक बने रहने का एक मजबूत मामला बनता है।

iii. अब तक केंद्रीय बैंक को वित्तीय स्थिरता का दायित्व सौंपने के पक्ष में सबसे मज़बूत तर्क यह रहा है कि इस पर कोई सवाल नहीं उठता कि यह वित्तीय प्रणाली के लिए अंतिम उपाय के रूप में ऋणदाता (एलओएलआर) रहा है। कोई केंद्रीय बैंक अपने

अंतिम उपाय के रूप में ऋणदाता का कार्य अधिक सक्षम ढंग से कर सकता है यदि इसका अधिदेश केवल वित्तीय संस्थाओं की निगरानी से बढ़कर निवारक कार्य लेने तक हो जाता है।

24. पिछले कुछ महीनों के दौरान सारे विश्व में गतिविधियाँ दो स्पष्ट प्रवृतियाँ दर्शाती हैं-केंद्रीय बैंकों को प्रणालीगत पर्यवेक्षण और विवेकपूर्ण विनियमन दोनों के लिए बढ़ा हुआ दायित्व प्रदान करने के प्रति एक निर्णयात्मक बदलाव; और दूसरा, वित्तीय स्थिरता के लिए खतरों की पहचान करने के प्रारंभिक दायित्व के साथ केंद्रीय बैंक, अन्य नियंत्रकों और सरकार को शामिल करते हुए परिषदीय प्रबंध को संस्थागत बनाना। ये परिषदें वित्तीय प्रणाली की सुरक्षा के हित में उच्चतर विवेकपूर्ण मानदंडों हेतु अनुशंसाएँ कर सकती हैं लेकिन उल्लेखनीय रूप से सहनशीलता और रियायतों के लिए अनुशंसाएँ नहीं कर सकती हैं।ऐसी दो समान विरोधाभासी प्रवृतियाँ उत्कृष्ट भावना पैदा कर सकती हैं और एक दूसरे की पूरक बन सकती हैं।

25. सारे विश्व की स्थिति की एक संक्षिप्त समीक्षा इस संबंध में अनुदेशात्मक होगी। अमरीका में प्रस्तावित वित्तीय स्थिरता पर्यवेक्षण परिषद का अध्यक्ष वित्त सचिव होगा और इसमें केंद्रीय बैंक तथा सभी नियंत्रक एजेंसियाँ शामिल होंगी। तथापि, यह अधिनियम उन सभी बैंक धारक कंपनियों के साथ-साथ किसी गैर-बैंक वित्तीय संस्था जो वित्तीय स्थिरता के लिए खतरा बन सकती हैं, पर पर्यवेक्षण के अधिकार के साथ संघीय प्रारक्षित निधि तथा भुगतान, समाशोधन और निपटान प्रणाली के अधिकार इस बात से निरपेक्ष होकर सौंपता है कि वे बैंक धारक कंपनियाँ हैं या नहीं। यूरोप में सम्पूर्ण ईयू वित्तीय प्रणाली के समष्टिविवेकपूर्ण पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी एक विशिष्ट संस्था की जरूरत की पहचान करते हुए यह प्रस्तावित है कि एक यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम परिषद (इएसआरसी) का गठन किया जाए जिसकी अध्यक्षता ईसीबी के अध्यक्ष करेंगे और उनके साथ 27 सदस्य राज्यों के केंद्रीय बैंकों के गवर्नर, तीन यूरोपीय पर्यवेक्षी प्राधिकारणों के अध्यक्ष और यूरोपीय आयोग का एक सदस्य रहेगा। वित्तीय मंत्रालयों का प्रतिनिधित्व करने वाले आर्थिक और वित्तीय समिति (ईएफसी) के अध्यक्ष उसमें पर्यवेक्षक के रूप में भाग लेंगे।

26. यूनाइटेड किंगडम में समष्टिविवेकपूर्ण के साथ-साथ समष्टिविवेकपूर्ण विनियमन के मामले में एक प्रतिमानक बदलाव जारी है। नई सरकार ने (i) वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) से विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण का दायित्व हटाकर बैंक ऑफ इंगलैंड के अंतर्गत एक नए विवेकपूर्ण विनियमन प्राधिकरण (पीआरए) को सौंपने; और (ii) *उन समष्टिगत मुद्दों की निगरानी करने के लिए जो आर्थिक और वित्तीय स्थिरता के लिए खतरा हो सकते हैं,* बैंक ऑफ इंगलैंड के भीतर एक वित्तीय नीति समिति गठित करने के लिए योजनाओं की घोषणा की है। इस समिति में वित्त विभाग का एक प्रतिनिधि, अन्य नियंत्रक और वित्त विभाग द्वारा नियुक्त अन्य बाहरी सदस्य शामिल होंगे। तथापि, वित्त विभाग किसी संकट के समय कार्रवाइयों के समन्वय की अगुवाई करेगा।

27. उपर्युक्त प्रवृतियाँ यह ज्ञात करती हैं कि सभी वित्तीय क्षेत्र नियंत्रक और वस्तुतः सरकारें जबकि प्रभावोत्पादक और दायित्वपूर्ण तथा किसी संकट को रोकने के साथ-साथ उसका प्रबंध करने के परिप्रेक्ष्य में वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में अपनी भूमिका अदा करती हैं, किसी एकल संस्था को वित्तीय स्थिरता का कार्यपालक दायित्व सौंपना आवश्यक हो जाता है और यह कि केंद्रीय बैंक उस एकल संस्था के रूप में सर्वोत्तम स्थिति में होता है। वित्त मंत्रालयों की सहभागिता और वास्तव में समन्वय संकट प्रबंध और समाधान में उनकी भूमिका को रेखांकित करता है।

28. वित्तीय स्थिरता के मुद्दे पर भारत में हम कहाँ खड़े हैं? ऐतिहासिक रूप से रिज़र्व बैंक ने वित्तीय स्थिरता के परिरक्षण में केंद्रीय भूमिका निभाई है। जैसाकि केंद्रीय बैंक

कार्य करते हैं, रिज़र्व बैंक पूर्ण सेवा वाला केंद्रीय बैंक है। मौद्रिक प्राधिकारी होने के अतिरिक्त हम बैंकों, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों और वित्तीय बाजारों के महत्वपूर्ण खण्डों के नियंत्रक और पर्यवेक्षक हैं। हम भुगतान और निपटान प्रणाली का नियंत्रण भी करते हैं।

29. प्रणालीगत पर्यवेक्षण के एक स्पष्ट अधिदेश के साथ समष्टिविवेकपूर्ण विनियमन और समष्टिविवेकपूर्ण पर्यवेक्षण के दायित्वों के इस विचित्र संयोजन ने रिज़र्व बैंक को विभिन्न आयामों के बीच सहक्रियाओं को संचालित करने की अनुमति दी है। अलग-अलग संस्थाओं के पर्यवेक्षण से आने वाली व्यष्टि-स्तर की सूचना समष्टि परिदृश्य को आकार देने में एक मूल्यवान निविष्टि रही है। इसके विपरीत समष्टिविवेकपूर्ण विनियमन से व्यापक समझ व्यष्टि संस्था स्तर पर विवेकपूर्ण अभिरक्षाओं को स्थापित करने में प्रभावी रही है। व्यष्टि और समष्टि स्तर पर्यवेक्षण ने (i) फर्म स्तर जोखिम और वित्तीय संस्थाओं के सामूहिक व्यवहार के साथ-साथ वित्तीय संस्थाओं के बीच सीधी सहबद्धता तथा वित्तीय बाजारों द्वारा सृजित अप्रत्यक्ष सहबद्धता के माध्यम से वित्तीय प्रणाली में अंतर-संयोजन; और (ii) वास्तविक अर्थव्यवस्था के साथ वित्तीय प्रणाली का निकट संबंध तथा मजबूत प्रतिसूचना प्रभावों की संभावना में अंतर्दृष्टि उपलब्ध कराने के द्वारा प्रणालीगत जोखिम के समाधान में सहायता की है।

30. यह वह प्रणाली है जिसने भली प्रकार कार्य किया है। मैं केवल एक उदाहरण देता हूँ, संकट के पूर्व के वर्षों में वाणिज्यिक वास्तविक भू-संपदा, उपभोक्ता ऋण और पूँजी बाजार निवेश जैसे कतिपय क्षेत्रों में ऋण की असामान्य बढ़ोतरी का अनुभव करते ही रिज़र्व बैंक ने एक मुहावरे *तूफान के सामने झुक जाओ,* जो अब आम हो गया है का उपयोग करने के लिए प्रावधानीकरण मानदंडों और जोखिम भारों को बढ़ाते हुए इन क्षेत्रों में ऋण प्रवाह के कड़ा कर दिया। यह उन महत्वपूर्ण कारकों में से एक है जिसने संकट के सबसे बुरे प्रभाव से हमें बचाया। पुनः जैसे ही संकट शुरु हुआ और उसने ऋण की जरूरत को दर्शाया, इन मानदंडों को सामान्य स्तरों पर वापस लाया गया। हमने भारत में जो किया वह वित्तीय स्थिरता को संरक्षित करने के लिए समष्टिविवेकपूर्ण उपकरण लागू करने का एक ऐतिहासिक मामला है। यह कार्रवाई रिज़र्व बैंक के व्यापक अधिदेश तथा इसके नियंत्रण में लिखतों को जारी करने के द्वारा संभव हुई। अतः यह रोचक है यद्यपि आश्चर्यजनक नहीं है, कि लगातार संसार भर में सुधार किए गए विनियामक प्रतिदर्श हमारे प्रतिदर्श के अनुरूप ही चल रहे हैं।

31. इस सारी व्याख्या के बाद मैं मूल प्रश्न की ओर लौटना चाहूँगा: *क्या वित्तीय स्थिरता केंद्रीय बैंकों का एक स्पष्ट अधिदेश होना चाहिए?* जैसाकि मैंने कहा, संकट के पूर्व इसका कोई उत्तर नहीं था; संकट के बाद अधिकांशतः इसका उत्तर *हाँ* है।

प्रश्न 4: क्या पूँजी खाते के प्रबंधन के लिए नियंत्रण समुचित व्यवस्था हैं?

32. संकट-पूर्व यह प्रश्न सामान्यत: उन समस्याओं के संदर्भ में खड़ा होता था जिनका सामना उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं को भारी और अस्थिर पूँजी प्रवाहों के प्रतिकूल प्रभाव का प्रबंध करने में करना पड़ता था। मुक्त बाज़ार प्रतिमान से प्राप्त यह उत्तर व्यापक रूप से *नहीं* में है।

33. समीक्षकों की यह राय है कि पूँजी नियंत्रण विकृत, व्यापक रूप से अप्रभावी, कार्यान्वयन में कठिन, बचने में आसान हैं और यह कि उनसे नकारात्मक बाह्य प्रभाव जुड़े होते हैं। दूसरी ओर पूँजी नियंत्रकों के समर्थकों ने यह तर्क दिया है कि नियंत्रण वांछनीय हैं क्योंकि वे मौद्रिक नीति स्वायत्ता का संरक्षण करते हैं, निष्क्रीयता लागतों को सुरक्षित करते हैं तथा विदेशी देयताओं की संरचना को दीर्घावधि परिपक्वताओं की ओर मोड़ते हैं और

समष्टि आर्थिक तथा वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करते हैं। नियंत्रण समर्थक नियंत्रणों से दूर रहने की सरलता के बारे में तर्क देते हैं। उनकी राय है कि लागत - हितलाभ गणना सब तरह से निर्णायक ही नहीं है क्योंकि नियंत्रण से बचने के प्रयास तथा किसी देश में और उसके बाहर निधियों की आवाजाही में अतिरिक्त लागत जुड़ी होती है, शायद जिसे प्राप्त करना नियंत्रण का लक्ष्य होता है।

34. पूँजी नियंत्रण पर चर्चा वर्ष 1990 के दशक के मध्य में एशियाई संकट के बाद विशेष रूप में पुन: उभरकर आयी क्योंकि इस संकट का मूल कारण पूर्वी एशिआई अर्थव्यवस्थाओं के खुले पूँजी खाते थे। ऐसा होने पर भी बौद्धिक रुढ़िवादिता पूँजी प्रवाहों पर नियंत्रण जारी नहीं रखे हुए थी जो अक्षम और अप्रभावी था। पूँजी नियंत्रणों पर चर्चा एक तार्किक निष्कर्ष तक नहीं पहुँची क्योंकि एशियाई अर्थव्यवस्थाएं तेज़ गति से सुधर गईं, अपनी निर्यात प्रतिस्पर्धा क्षमता को पुन: प्राप्त कर लिया और स्व-बीमा के लिए बाह्य प्रारक्षित निधियाँ निर्माण करना शुरू कर दिया।

35. तथापि, हाल का संकट पूँजी नियंत्रणों पर वैश्विक मत का एक स्पष्ट मोड़ रहा है। इसमें प्राप्त प्रमाण यह हैं कि उभरती हुई अर्थव्यवस्थाएं जो अधिक खुली हुई थीं उन अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षा अधिक प्रभावित हुईं जो यह प्रदर्शित करते हुए कम खुली हुई थीं कि अपरिपक्व खुलापन सहायता करने की अपेक्षा अधिक घातक होता है। इससे पूर्व में व्याप्त उस विचार की समीक्षा को बल मिला कि पूँजी नियंत्रण सर्वदा और सर्वत्र अपरिहार्य हैं। उल्लेखनीय रूप से अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष[1] ने फरवरी 2010 में एक नीति टिप्पणी प्रस्तुत की जिसने पहले से व्याप्त इस रुढ़िवादिता को पलट दिया। इस टिप्पणी में यह उल्लेख किया गया है कि *वे परिस्थितियाँ शामिल हैं जिनमें पूँजी प्रवाहों में उछाल के प्रति नीति कार्रवाई की विधिमान्यता एक संगठक बन सकती है* । विश्व बैंक[2] ने उल्लेख किया है कि यदि कोई संकट उत्पन्न होता है तो पूँजी प्रतिबंध किसी संकट को रोकने अथवा उसके प्रभाव को कम करने के एक लघु प्रयत्न के रूप में अनिवार्य हो सकते हैं। एशियाई विकास बैंक संभावना - 2010 में यह टिप्पणी की गई है कि सावधानीपूर्वक तैयार किए गए पूँजी नियंत्रण अवरोधात्मक अल्पावधि पूँजी प्रवाहों से बचाने में सहायता कर सकते हैं तथा विनिमय दरों में अत्यधिक अस्थिरता को रोक सकते हैं।

36. अत: ये सभी पुनर्विचार क्या प्रस्तावित करते हैं? ये सुझाव देते हैं कि बुद्धिमानी *फेस्टिना लेंटे* में है जैसाकि रोमन कहा करते थे - धीरे-धीरे तेज़ी लाओ। अपने पूँजी खाते खोलो लेकिन अपने घरेलू और बाहरी परिस्थितियों में खुलेपन का प्रयत्न करो। इस व्याख्यान के संदर्भ में इस प्रश्न का जवाब कि *क्या पूँजी खाते के प्रबंधन के लिए नियंत्रण समुचित व्यवस्था हैं?*, संकटपूर्व के एक अर्हक *नहीं* से बदलकर संकट के बाद एक अर्हक *हाँ* हो गया है।

प्रश्न 5: क्या मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभाव समाप्त हो गया है?

37. संकट के पहले इसका जवाब *भरोसा है* था। इस निर्णय की इन आशंकाओं के बीच पुनर्वीक्षा की जा रही हैं कि संकट से लड़ने के लिए उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा असाधारण विस्तार वास्तव में संरचनात्मक राजकोषीय ढाँचे में बदल रहा है और यह कि मौद्रिक नीति के लिए इसके अलावा कोई विकल्प नहीं होगा कि मध्यावधि में जारी परिवर्धित सरकारी उधारों को आर्थिक सहायता दी जाए। अभी हाल में हम सभी ने देखा है कि किस प्रकार यूरोपियन केंद्रीय बैंक को कुछ यूरोपियन देशों में सरकारी

[1] ओस्ट्री, जोनाथन डी. और अन्य (2010), ''कैपिटल इन्फ्लोज: दि रोल ऑफ कंट्रोल्स'', आइएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, एसपीएन/10/04, 19 फरवरी 2010.

[2] विश्व बैंक: वैश्विक निगरानी रिपोर्ट 2009: अ डेवलपमेंट एमर्जेंसी, वाशिंगटन डीसी.

ऋण संकट का समाधान करने में असामान्य आर्थिक सहायता प्रदर्शित करनी पड़ी है। कई लोग डरते हैं कि यह उस प्रवृत्ति की केवल शुरूआत भर है जिसके द्वारा राजकोषीय नीतियाँ एक बार फिर मौद्रिक रुझानों को निर्देशित करना शुरू करेंगी।

38. मौद्रिक नीति के राजकोषीय आधिपत्य का इतिहास काफी रोचक रहा है। महान मंदी के बाद अस्सी वर्षों तक अपना प्रभाव दिखाने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीति के बीच एक विख्यात प्रतिस्पर्धा देखी गई। महान मंदी के बाद कम से कम तीन दशकों में कीनस की बौद्धिक विरासत शासन करती रही है। सरकारों ने इस बात की चिंता किए बिना कि ऋण निर्माण के प्रभाव क्या होंगे, जिस मूल्य पर वे चाहते थे तथा जितना वे चाहते थे उतना अधिक उधार लिया तथा केंद्रीय बैंकों को जबर्दस्ती इस अपव्यय में चुप्पी साधनी पड़ी है।

39. यह प्रवृत्ति वर्ष 1960 के दशक में मिल्टन फ्रीडमैन तथा अन्यों के द्वारा किए गए अत्यंत बौद्धिक कार्यों के परिणामस्वरूप इस तर्क के साथ उलटने लगी कि मुद्रास्फीति सर्वदा और सर्वत्र एक मौद्रिक परिदृश्य है और यह कि ऋण वित्त-पोषित सार्वजनिक व्यय से उत्पादन लाभ न केवल अस्थायी होगा बल्कि आकस्मिक रूप से मुद्रास्फीतिकारी भी होगा। इसके लिए समर्थक प्रमाण वर्ष 1970 के दौरान अवरूद्धताजन्य स्फीति के निरंतर प्रसंगों से प्राप्त हुए जिसने बेरोज़गारी और मुद्रास्फीति के एक भ्रामक संयोजन को देखा। यह विश्वास कि जारी राजकोषीय घाटे स्पष्टत: अनिवार्य नहीं हैं, वर्ष 1980 के दौरान विशेष रूप से तब सुदृढ़ होता गया जब देश वैश्विक प्रणाली में समेकित हो गए और राजकोषीय रूप से अनुत्तरदायी अर्थव्यवस्थाओं ने यह महसूस किया कि विश्व पूँजी बाज़ार उच्चतर प्रिमियम की माँग करने के द्वारा उन्हें दण्डित करेंगे।

40. वर्ष 1990 के दशक के मध्य से ही बढ़ते हुए कई देशों में केंद्रीय बैंकों द्वारा घाटे और/अथवा ऋण पर सीमाएं लगाते हुए राजकोषीय नियमों को स्वीकार करने तथा ऋण की प्रारंभिक वित्तीय सहायता प्रतिबंधित करने की प्रवृत्ति भी रही है। इस प्रयास का एक व्यापक परिणाम यह हुआ है कि केंद्रीय बैंकों ने मौद्रिक नीति के स्वतंत्र संचालन में स्वयं को अपेक्षाकृत मुक्त रखा है। न केवल वे राजकोषीय बाध्यताओं से मुक्त रहे हैं बल्कि एक व्यवहारयोग्य राजकोषीय ढाँचे में भी मुक्त रहे हैं। मूल्य स्थिरता का वातावरण उस तीव्र वृद्धि के साथ मिलकर जिसने महान संयम को विशेषता प्रदान की है उसे राजकोषीय आधिपत्य से मौद्रिक नीति को मुक्त करने के गुणों के समर्थन के रूप में देखा गया है।

41. इन कार्यों की सुखद स्थिति संकट के बाद समाप्त हो गई और मौद्रिक नीति के राजकोषीय आधिपत्य के बारे में डर पुन: उभरा है। इस संकट की जरुरतों के अनुसार असाधारण राजकोषीय विस्तार और कब तक और किस प्रकार इसे बदला जा सकेगा के बारे में मिली-जुली चिंताएं हैं। लेकिन अब तक संकट से संबंधित चक्रीय घाटे के बारे में अधिक चिंताएं नहीं हैं बल्कि अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंड़राते हुए संरचनात्मक राजकोषीय ढाँचे के बारे में चिंताएं बनी हुई हैं। वर्तमान आकलन यह है कि धनी देश अपने सामाजिक सुरक्षा भुगतान दायित्वों में बढ़ती हुई जनसंख्या और घटती हुई कार्यशक्ति के कारण तेज़ वृद्धि देखेंगे और यह कि उन्हें इन प्रतिबद्धताओं को वित्तीय सहायता देने में वर्ष-दर-वर्ष ऋण की उल्लेखनीय राशि प्राप्त करने की आवश्यकता होगी। यदि ऐसी स्थिति है तो मध्यावधि में मौद्रिक स्वतंत्रता राजकोषीय बाध्यताओं द्वारा घिरी रहेगी।

42. पिछले कुछ महीनों के दौरान यूरोप में सरकारी ऋण संकट अब एक दूसरे क्षेत्र के रूप में बदल गया है जहाँ राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच तनाव बढ़ रहे हैं। यूरो प्रणाली की तरह मौद्रिक संघ जो विशेषता लाते हैं वह यह है कि सदस्य देश स्वतंत्र राजकोषीय नीतियों का पालन करते हैं लेकिन आवश्यक समायोजन करने के लिए विनिमय दर अथवा

मौद्रिक नीति का बोझ उठाने के लिए उनके पास साधन नहीं हैं। सदस्य देशों द्वारा अपनी सामूहिक मौद्रिक नीति की स्वतंत्रता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए यह मज़बूत और विश्वसनीय राजकोषीय नीतियों के महत्त्व को रेखांकित करता है। इसके अभाव में मौद्रिक नीति अलग-अलग सदस्यों के राजकोषीय आधिक्य का बंधक बन जाएगी।

43. भारत में हम इस बारे में हम कहाँ खड़े हैं? यह कहना निष्पक्ष होगा कि वास्तव में हमने अधिकांश वैश्विक प्रवृत्तियों का पालन किया है। वर्ष 1970 के दशक तथा वर्ष 1980 के दशक के अधिकांश भाग में मौद्रिक नीति प्राय: राजकोषीय नीतियों का पूर्णत: बंधक बनी रही है। तथापि, समग्र विश्व की प्रवृत्तियों का पुनः पालन करते हुए वर्ष 1990 के दशक की शुरुआत से ही मौद्रिक नीति के राजकोषीय आधिपत्य में धीरे-धीरे कमी आयी है।

44. मौद्रिक नीति पर राजकोषीय दबावों का कम होना एक निरंतर प्रक्रिया बनी हुई है लेकिन दो अलग-अलग घटनाओं ने महत्त्वपूर्ण माईलस्टोन निर्धारित किए हैं। पहला, अप्रैल 1997 से तदर्थ खज़ाना बिलों को चरणबद्ध रूप से पूरी तरह समाप्त करने के लिए रिज़र्व बैंक और सरकार के बीच एक करार हुआ जो एक ऐसा प्रयास था जिसने सरकार के राजकोषीय घाटे को केंद्रीय बैंक द्वारा स्वत: मौद्रीकरण की अत्यंत खराब प्रथा को समाप्त होते हुए देखा। दूसरा, राजकोषीय दायित्व और बज़ट प्रबंध (एफआरबीएम) अधिनियम था जिसने अन्य बातों के साथ अप्रैल 2006 से प्राथमिक बाज़ार में सरकारी ऋण को वित्तीय सहायता देने से रिज़र्व बैंक को रोका।

45. अधिकांश देशों की तरह भारत में भी राजकोषीय प्रोत्साहन संकट के प्रति कार्रवाई का एक भाग था तथा मौद्रिक नीति को परिवर्धित सरकारी उधार में मौन रहना पड़ा था। आगे जाकर सरकार के लिए चुनौती यह होगी कि राजकोषीय समेकन को जारी रखा जाए जो इस वर्ष के बज़ट से शुरू हुआ है तथा रिज़र्व बैंक के लिए चुनौती यह होगी कि राजकोषीय बाध्यताओं से मुक्त होकर मौद्रिक नीति संचालन के लिए पुन: जगह बनाई जाए।

46. वैश्विक और भारतीय परिदृश्य में यह व्यापक समीक्षा जो कुछ दर्शाती है वह यह है कि मौद्रिक नीति के राजकोषीय आधिपत्य का मामला अभी भी निर्णायक मण्डल के समक्ष प्रस्तुत नहीं हुआ है। लेकिन यह बताना ईमानदारी से कुछ कम नहीं है कि राजकोषीय बाध्यताओं से मौद्रिक नीति की स्वायत्ता एक बार फिर खतरे में है और उस खतरे का समाधान करने में सरकारों और केंद्रीय बैंकों दोनों के द्वारा विश्वसनीय प्रयत्न अपेक्षित है।

47. अत: इस व्याख्यान के स्वरूप में इस प्रश्न कि क्या मौद्रिक नीति का राजकोषीय आधिपत्य समाप्त हो गया है का नया उत्तर उस पुराने उत्तर *भरोसा है* की तरह ही है।

निष्कर्ष

48. इससे मुझे पुराने प्रश्न और नये जवाबों का निष्कर्ष मिला है। अपनी बात समाप्त करते हुए मैं यह कहना चाहूँगा कि यह संकट उस व्यक्ति के लिए एक अनुस्मारक रहा है जो यह अपेक्षा करता हो कि परंपरागत बुद्धिमानी और दृष्टिकोण पर सवाल करने की जरूरत है। सर चिंतामन की तरह जिन्होंने उस समय अध्यक्षता की थी जब वैश्विक के साथ-साथ राष्ट्रीय, राजनीतिक, आर्थिक और वित्तीय व्यवस्था मौलिक रूपांतरण में जारी थी, हम भी उस संक्रमण बिंदु पर खड़े हैं जो अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संरचना में एक उल्लेखनीय बदलाव बन सकता है। सर चिंतामन देशमुख को जो सबसे अच्छी श्रद्धांजलि हम दे सकते हैं वह यह स्मरण करना है कि हम तभी प्रगति कर सकते हैं जब हम पुराने सवालों के नए उत्तर बदलती परिस्थितियों में स्वीकार करने के लिए इच्छुक हों।